॥ ओ३म् ॥

ईश्वर पूजा का वैदिक स्वरूप

''ओ३म् ईशावास्यमिद ँ सर्वं यत्किञ्च जगत्याञ्जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥
ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँ समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोस्ति न कर्म लिप्यते नरे । ''

माननीय बहिनों व भाईयों,

आज का विषय 'ईश्वर की पूजा का वैदिक प्रकार, परमात्मा की उपासना का वैदिक प्रकार क्या है' यह आपकी सेवा में वर्णन करूंगा। क्योकि इसमें कुछ भाग ऐसा है जिसमें ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है इसलिये मेरा यह निवेदन है कि चारों ओर से अपनी तबीयत हटाकर मेरी ओर केन्द्रित कर लें ताकि बात जल्दी समझ में आए।

मैने कल बताया था कि ईश्वर, जीव और प्रकृति ये तीन अनादि पदार्थ है और इनके अनादि होने का वैज्ञानिक तरीका वर्णन किया था जिससे कोई इंकार नही कर सकता। आज उसे मैं फिर दोहराता हूँ कि जो चीज सबसे छोटी है वह नाकाबिले तकसीम है, उसका विभाग नही हो सकता और जो सबसे बडी है उसका भी विभाग नही हो सकता है। यह दो पैमाने हैं जिनसे किसी वस्तु के अनादित्व को जाना जा सकता है इन दो पैमानों को, मैने आपके जहन में, ताजा करने के लिये दुहरा दिया है। इन दो पैमानों से दुनिया की चीजों को नाप लीजिये। दुनिया में दो प्रकार की चीजे है, एक जड़ और दूसरी चेतन। जो जड़ है वे ज्ञान शून्य है उनमें ज्ञान नही है। दूसरी चेतन है जिसमें ज्ञान है। इन दोनों प्रकार की चीजों को नाप लिजिए। चेतन में सबसे छोटा जीवात्मा है और सबसे बडा परमात्मा है। जड़ वस्तुओं में सबसे छोटा परमाणु है और सबसे बडा आकाश है। यह वैज्ञानिक तरीका है जिसमें मैने इस तीनों चीजों को (ईश्वर, जीव और प्रकृति) अनादि साबित किया है, कदीम साबित

किया है। नित्य साबित किया है। इन्ही तीनों के बारे में आज बात आएगी जरा ध्यान से सुनिए।

हमारे दुर्भाग्य से या सौभाग्य से भारत में कई मतावलम्बी है। उनमें मुख्य रूप से ईसाई, मुसलमान, आर्यसमाजी व सनातनधर्मी है। बाकी और जो है उनको इतनी मुंख्यता नही है। मुसलमानों का, खुदा की इबादता का अपना एक तरीका है। ईसाईयों व मुसलमानों मे कोई विशेष भेद नहीं है। थोडा ही भेद है इसलिये उन्हे मैं मुसलमानों से जुदा नही करता हूॅ। सनातन धर्म व आर्य समाज में भी कोई फर्क नहीं है हम चाहते हैं कि थोड़ा से भेद उनमें और हममे है। वह न रहे। उनको खास तौर से इस मजमून में शामिल कर लिया है। मुसलमानों से इस सम्बन्ध में पूछताछ करने पर पता चलता है कि वे खुदा की इबादत करते है। इबादत 'अ ब द' शब्द से बना है। जिसके माने गुलाम के है, सेवक के है। इबादत का अर्थ हुआ कि हम अपने मालिक के सामने अपने गुलाम और बन्दे होने का इकरार करते है। हम अपनी इबादत में कहते है कि ऐ खुदा तू हमारा मालिक है और हम तेरे बन्दे है, हम तेरे सेवक है, हम तेरे खादिम है। यह गोया इबादत में हम इकरार करते है। इस पर मैने उनसे एक प्रशन पूछा था। बहुत पुरानी बात है। दीनानगर की बात है मौलवी अल्लाह दित्ता बहस कर रहे थे। उनसे मैने पूछा ' जरा यह फर्माइए कि जब आप रूकू करते है (घुटनों पर हाथ रखकर झुकते है) ओर जब आप सिजदा करते है, अपनी पेशानी को जमीन पर रख देते है, तो इस सबसे आपका क्या मतलब है?" कहने लगे, 'पंडित जी हम खुदा का आदाब बजा लाते है। 'मैने पूछा, 'इस आदाब बजा लाने से खुदा पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है?" तो मौलवी साहब ने उत्तर दिया 'खुदा इस आदाब बजा लाने से खुश होता है?" तो मैने कहा कि आप आदाब बजालाकर उसमें तबदीली पैदा करते है। पहले वह खुश नही था आपके आदाब बजा लाने से वह खुश हो जाता है। आप उनमें तबदीली पैदा करते है और वह मुतगय्यर हो जाता है, बदल जाता है। पहले वह खुश नही था, बाद में खुश हो जाता है। इस तरह

उसमें हर वक्त हर लम्हा, तबदीली होती रहती है। क्योकि न जाने कौन-कौन कहां-कहां नमाज पढ़ रहा है, उसका आदाब बजा ला रहा है और उसमें हर वक्त कुछ न कुछ परिवर्तन होगा। ऐसा खुदा प्रतिक्षण परिवर्तनशील है। ऐसा खुदा मुतगय्यर होगा, परिवर्तनशील होगा। मौलवी जरा होश में आये और कहने लगे " पण्डित जी, खुदा पर इसका कोई असर नही होता, इसका असर हम पर ही होता है। मैने कहा, आप संभल गये, वर्ना आपका खुदा खुदा न रहकर कुछ और ही हो जाता, तबदील होकर न जाने क्या बन जाता"। याद रखिए खुदा पर इस आदाब बजा लाने का कोई असर नही है।

खुदा से आप फायदा उठाइये। यदि इस बल्ब के सामने आपको कोई पुस्तक पढनी है तो आप इस प्रकार खड़े होइये जिससे कि आप अच्छे प्रकार से पढ़ सके। यह आपका कर्तव्य है, बल्ब का नही। इस प्रकार खुदा में कोई तबदीली नही होती। मैने कहा आपके तरीके से तो आप एक्टर होगे और खुदा एक्टेड अपना होगा। आप फाइल होगे और वह मफऊल होगा, आप कर्ता होगे और वह कर्म हो जाएगा। इसलिये यह मानने योग्य बात नही होगी कि खुदा पर आदाब बजा लाने का कोई प्रभाव होता है। ईसाइयों के सम्बन्ध में मैने आपको पहले ही कहा है कि उनका तरीका, मुसलमानों से मिलता-जुलता ही है।

आर्य समाज कहता है कि हम भगवान की उपासना करते है। उपासना का अर्थ है कि हम उसके निकट जाते है, उप अर्थात नजदीक आसन अर्थात् बैठना। हम परमात्मा के करीब बैठते है। आर्यो की दृष्टि से उपासना का अर्थ यह हुआ कि हम उसकी आज्ञा का पालन करते है, हम ईश्वर में निवास करते है और हम ईश्वर के गुणों को धारण करते है और हम इस प्रकार उसके निकट हो जाते है, करीब हो जाते है। करीब होने का यही अर्थ है। एक लड़का अपने उस्ताद के करीब हो जाता है। अर्थात जो भी उसने पढ़ाया है उसे अपने दिल में रख लेता है। मेज उसके ज्यादा नजदीक है मेज में इल्म को ग्रहण करने

की योग्यता नही है। लेकिन मेज व कुर्सी से दूर जो बच्चे है उनमें ग्रहण करने की योग्यता है। उस्ताद जो कह रहा है वे उसे समझते है, जिनमें समझने की काबलियत नही है। वह अलग चीज है । तो जिन बच्चों ने उस्ताद के पढाये हुये को अधिक से अधिक ग्रहण किया है वे उस अपेक्षा से, उतने ही उस्ताद के नजदीक है। इसलिये आर्य समाजी लोग कहते है कि परमात्मा के गुणो को जिसने ज्यादा से ज्यादा ले लिया है वह ईश्वर के अधिक नजदीक है। और इसी के मायने उपासना है। इस उपासना के सम्बन्ध में तफसील है किन्तु यह मैने मुख्तसर आपको अभी बताया है यह आर्य तरीका है।

सनातन धर्मी भाई इस सम्बन्ध में पूजा और भक्ति दो लफजों का अधिक प्रयोग करते है। दोनो शब्द संस्कृत के है। पूजा शब्द पूज धातु से बना है। और पूज् का अर्थ सेवा है पूज सेवायां, भक्ति शब्द में भज् धातु है, भज, सेवायां, भज् का अर्थ भी सेवा है। दोनो शब्दों के मायने सेवा के है। खिदमत के है। लेकिन एक बात इससे पहले समझना आवश्यक है कि तीन चीजे है ईश्वर, प्रकृति और जीवात्मा। इस नक्शे को जरा समझ लिजिये। एक तरफ ईश्वर, बीच में जीवात्मा और दूसरी तरफ प्रकृति। प्रकृति और परमात्मा दोनो पूर्ण है।आप कहेगें कैसे? प्रकृति कहती है मुझे किसी चीज का इल्म नही, मैं ज्ञान शून्य हूँ, मैं बिल्कुल गैर जी शऊर हूँ। मुझे न अपना इल्म है और न गैर का। जैसे वह लकडी है। इस लकड़ी को न अपना ज्ञान है कि मैं लकड़ी हूँ और न गैरो के मुताल्लिक इल्म है कि लोग यहां भाषण सुन रहे है। इसे दोनो तरह का इल्म नही है। यह एक प्राकृतिक चीज है। प्रकृति से बनी हुई है। (मेटीरियल आबजेक्ट) है जो मेटर या प्रकृति के स्थान पर है जिसे न अपना इल्म है न गैर का।

भगवान क्या कहता है? वह कहता है कि मै अपने आपको भी जानता हूँ और अपने से अन्य चीजों को भी जानता हूँ। जानने मे ईश्वर सबसे पूरा और न जानने में प्रकृति सबसे पूरी है। यह दोनों पूरे। इन दोनों को किसी अन्य की आवश्यकता नही है। ईश्वर व प्रकृति दोनों

जरूरत से जीवात्मा को आवश्यकता है बहुत सी चीजें उसकी आवश्यकता की है। जो जीवात्मा ईश्वर से लाभ उठाता है या यों कहिए कि ईश्वर अपने अस्तित्व को सफल कर रहा है, उसे यूजफुल बना रहा है। जीवात्मा परमात्मा के संसर्ग से मुक्ति का लाभ प्राप्त कर सकता है। और दूसरी ओर प्रकृति है। प्रकृति से सुख की सिद्धि करें। प्रकृति की मदद से वह साधारण सुख से लेकर चक्रवर्ती राज्य तक की प्राप्ति करें। प्रकृति से मैटिरियल प्रोग्रेस करें और ईश्वर से मुक्ति प्राप्त करें। जीवात्मा इन दोनो से फायदा उठाता है। यदि जीवात्मा को मध्य से हटा दिया जाये तो दोनों यूजलेस है। दोनों निकम्मे है। जैसे बाजा, बजाने वाले की अनुपस्थिति में निकम्मा हैं किसी काम का नही है। बाजा बजाने वाला यदि है तो बाजे का कोई उपयोग हो सकता है इसलिये प्रत्येक वस्तु अपने वजूद से अन्यों को लाभ पहुंचाकर ही सफल होती है। मैने अपने कल के व्याख्यान में यही तो कहा था कि भगवान् आल नालिज है सर्वज्ञ है। सर्वज्ञ होने का क्या लाभ यदि उस ज्ञान से अल्पज्ञ लाभ न उठा सकेगें ? उसका लाभ तब ही है जब उससे अल्पज्ञों को लाभ पहुंच जाये, कम जानने वालों को फायदा पहुंच जाए। जहां कहीं भी आप देखेंगे यही उसूल देखेगें। एक शख्स गली में खडे हुये एक तजस्सुम की निगाह से देख रहे थे, नये आदमी थे, किसी को ढूंढ रहे थे। कोई बुजुर्ग वहाँ बैठे थे उन्होने पूछा कहिये जनाब किसे ढूँढ रहे हैं आपको किसकी तलाश है?'' उस नवागन्तुक को उन्होने अपेक्षित जानकारी दे दी। कोई पूछने लगे '' क्यों साहब, आप की क्या कोई रिश्तेदारी थी जो आपने उसे जगह बताई?'' नहीं उसका ज्ञान तकाजा कर रहा है, वह वाकिफ है और जो शख्स वहां आये है वे नावाकिफ है। उसके जानने से फायदा यही है कि वह न जानने वालों को उससे वाकिफ कराये।

जीवात्मा मुक्ति भी प्राप्त कर रहा है। और दुनिया का सुख भी साथ ही ले रहा है। प्रकृति के द्वारा जीवात्मा संसार में अपनी उन्नति करता जाये : हां, यह बात अवश्य ध्यान में रखनी है कि सुख मे अपने

कर्तव्य को न भूल जाये और भगवान् से मुक्ति और निजात हासिल करे क्योकि वह ज्ञान का भण्डार है और नेक है। उसमें ये दोनों चीजें मौजूद है।

तो मैं सनातन धर्मी भाइयों की भगवान की पूजा व भक्ति का जिक्र कर रहा था। वे कहते है कि हम परमात्मा की खिदमत करते है। पूजा करते है, भगवान की सेवा के लिये क्या चाहिये, जरा यह विचारने की बात है। बहुत सीधे -सीधे तरीके पर सेवक (सेवा करने वाला) सेव्य (जिसकी सेवा की जाये) सेवा (जो क्रिया सेवा केलिये करता है) और सेवा का सामान ये चार चीजें होनी जरूरी है। यहां जीवात्मा खादिम या सेवक है परमात्मा मखदूम या सेव्य है सेवा की क्रिया और सेवा की सामग्री जो भी उन्होने (सनातनी भाइयों ने) समझ रखी है , इन सब चीजों से वे ईश्वर की पूजा करते है।

भगवान की पूजा करने से पूर्व अब यह मालमू करना पडेगा कि उसकी सेवा कैसे की जाये? भगवान के लिये हम कौन सी ऐसी चीज लाए जिसकी उसे आवश्यकता है? जब उसकी आवश्यकता का हमें ज्ञान हो जाएगा तब ही हम उसकी सेवा कर सकेगें। इससे पहले नही।

मैं जब यहां आया तो लोगों ने मुझसे पूछा कि आप चाय पीते है? मैने कहा,''बिल्कुल नही। मै चाय नही पीता हूँ। चाय कोई पीने की चीज है'। इसकी कोई जरूरत नही है। लोगो ने खामका चाय पीने शुरू की। मुझे इतनी उम्र हो गयी। (80 वर्ष की) कभी आवश्यकता ही नही पडती। मैं तो हंसी मे कह दिया करता हूँ कि दूध और पानी दोनो को किसी ने बिगाड़ दिया है। और कई बार लगभग सभी जगह चाय के लिये पूछते है और मैं मना कर देता हूँ। तो चाय मेरी आवश्यकता में शामिल नही है। क्या मेरी सेवा चाय द्वारा हो सकती है? स्पष्ट उत्तर होगा नही हो सकती। मेरी इसके जरिये खिदमत नही हो सकती। फिर कौन मेरे लिये चाय लायेगा? यदि चाय कोई लाता भी है तो चाय लाना उसका व्यर्थ होगा। क्योकि चाय लाना मेरी

जरूरत में शामिल नही है। शादी वगैरा मे लोग मुझे बुला लेते है तो उनके तरीके बने हुये है? एक थाली में सुपारी होती है, इलायची, मिश्री, सोंफ, लौंग आदि होती है। और कारतूस भी रखे होते है। जिन्हे लोग सिगरेट कहते है। जब मुझे वह थाली दिखाते है तो मैं इलाचयी ले लेता हूँ। शेष चीजें पान सुपारी मेरी जरूरत में शामिल नही है। उन्हे नही लेता हूँ क्योंकि मेरी सेवा पान-सुपारी से नही की जा सकती।

यदि कोई मनुष्य मेरी सेवा करना चाहेगा तो पहले मेरी आवश्यकता की चीजे मालूम करेगा तब मेरी सेवा करेगा मेरे यहाँ आने पर मेरी आवश्यकता की चीजें मालूम की गयी और फिर वैसी वस्तुएं समय पर मेरे लिये आने लगी। प्रातःकाल दूध आ जाता है। उन सभी सज्जनों का मैं मशकूर हूँ जो मेरे लिये इतना कष्ट उठाते है। वे जानते है कि रामचन्द्र को प्रातकाल दूध की आवश्यकता होती है। वह भी पाव या डेढ पाव से अधिक नहीं। यदि अधिक होगा तो मुझे हानिकारक होगा। मैं जब लोगो के यहां खाना खाने जाता हूँ तो कह देता हूँ कि रहने दो मुझे ज्यादा खाना मत दो। यदि अपनी बदनामी करानी है तो दे दो मुझे हजम नही होगा। मैं बीमार पड़ जाऊगां । लोग कारण पूछेंगे तो मुझे बताना पडेगा कि अमुक सज्जन ने यहां भोजन किया था उन्होने अधिक खिला दिया। इसलिये बीमार हो गया। तो इस प्रकार खिलाने वाला भी मेरी सेवा न कर सकेगा। जितना मैं खा सकता हूँ। और जो मेरे लिये स्वास्थ्य कर भोजन होगा उसी से मेरी सेवा या खिदमत की जा सकती है।

मैं अम्बाला में वर्मा जी के यहां ठहरा हुआ था। उनके यहां एक और भी सज्जन ठहरे हुये थे। वे चाय पीते थे। नौकर को कुछ जल्दी थी। उसने चाय उस वक्त बनाकर दी जब वे शौच जाने के लिये तैयार हो रहे थे। उन्होने पूछा "क्या लाये हो"? नौकर ने उत्तर दिया "चाय लाया हूं। आप चाय पीते है न"। उन्होने उत्तर दिया, हां पीता तो हूँ। लेकिन यह समय पीने का तो नही है। मैं शौच जा रहा हूँ इससे मालूम

हुआ कि आवश्यकता की चीज भी बामौका दी जानी चाहिये।

तो आप और मैं दोनो भगवान को आवश्यकता को मालूम करें जिससे हम उनकी सेवा कर सकें। आज तक कोई आदमी पता नहीं चला सका कि यह चीज ईश्वर की जरूरत दाखिल है। पानी वह हमें देता है, भोजन वह हमें देता है, जीवन को बनाये रखने की सारी सामग्री वह हमें देता है, जिसका भण्डार अपूर्व है वह हमसे क्या चाहेगा?

मुसलमान से हमने पूछा तो उन्होने कुर्आन की एक आयात पढ़ दी।

या खखक्तुलिजत्रा बल इसा इल्लालियाबुदून् ।

माउरींदु मिन्हुम् मिर्रिज्किव्य उरीदु ऐ मुत्वम सून।

हमें न किसी गिजा की जरूरत है न ताहम की। यदि किसी चीज की जरूरत है तो वह यह है कि 'हमारी पूजा करो।'

किसी ने भी खुदा की जरूरत को नही बताया। जब किसी को भी खुदा की जरूरत का पता नही है तो बताइये कि अब क्या किया जाये? भगवान् की पूजा कैसे की जाये।

जरूरत किसे कहते है। जरा यह समझ लिजिये। जिसके बगैर जरूरत मंद को जरर पहुंच जाए। जिसे मैं कहूं कि यदि मुझे हवा न मिले, जो मेरी जरूरत में दाखिल है, तो मुझे जरर पहुंच जायेगी, नकुसान पहुंच जायेगा। पानी अगर न मिले तो नुकसान होगा, रात को जितना आराम मिलना चाहिये यदि मुझे न मिले तो परेशानी होगी। क्यों नुकसान होगा क्योकि यह मेरी आवश्यकता में शामिल है। भगवान के लिये ऐसी कौन सी चीज है जिसके बगैर उसे नुकसान पहुंच जायेगा। या हानि हो जायेगी। बुद्धिमानों और अक्लमंदों ने कभी यह बात सोची है। जब इतनी तफसील से बात बयान की गयी तो बात

स्पष्ट हुई और यह समझ में आया कि भगवान को किसी चीज की जरूरत है ही नही। जिसे किसी वस्तु की आवश्यकता ही नही उसकी सेवा कैसे की जाये। जो जरूरत से खाली हो उसकी सेवा कैसे की जाये। हमें तो कुछ देकर सेवा करने की आदत पड़ी हुई है। ये बहिने और बेटियां बैठी है। क्या कहना इनका? इनका गुण यह है कि सबको खिलाकर खाती है। यदि कोई बेवक्त भी आ जाये तो अपना खाना भी उसे दे देती है। और स्वयं भूखी सो जायेगी। लेकिन यह भी तो उनकी सेवा करती है। जिनकी कुछ आवश्यकता है। लेकिन यदि कोई ऐसा मनुष्य आये जिसकी कोई आवश्यकता ही न हो उसकी सेवा कैसे कर सकेंगी?

मेरे पास एक पुस्तक थी - जिसका नाम था - दी एज ऑफ रीजन, उसे टामस पेन ने लिखा था । अंग्रेजी में लिखी हुई पुस्तक है। उसने इस सम्बन्ध में बडा अच्छा लिखा है। हम खुदा की खिदमत उस तरह नही कर सकते जिस तरह हम उनकी करते है। जो खिदमत के बगैर अपना गुजारा नही कर सकते। हम अपनी खिदमत करवाये बगैर नही रह सकते, इसलिये जिस तरह हमारी खिदमत होती है उस तरह खुदा की खिदमत नही की जा सकती क्योंकि उसकी कोई जरूरत नही है। कितना अच्छा लिखा है टामस पेन ने।

पूजा करने वालों ने जब यह बात समझ ली कि ईश्वर की सेवा कुछ देकर नही की जा सकती और उन्हे ये ही तरीका आता था वे पंडितों और पाधाओं से पूछने लगे कि वे कुछ बताये। किंतु अफसोस कि पंडित और विद्वान आलस्य, प्रसाद, अज्ञान और स्वार्थ के कारण लोगों को सही रास्ता न बता सकें। जब न बता सके तो लोगो को पूजा तो करनी ही थी। इन्होने अपने रास्ते बना लिये। जैसे आर्य समाज के लोगो को आर्य समाज स्थापित करने की आदत है। ऐसे ही इन्हे भी पूजा करने की आदत पडी थी। इसलिये इन्होने अपना रास्ता निकाल लिया।

इन्होने अपनी अपनी मर्जी और क्षमता अनुसार अपने-अपने ईश्वर बना लिये। किसी ने लकडी के बनाये, किसी ने पत्थर के। जिसके पास सोना था उसने सोने के बनाये, जिसके पास चांदी थी उसने चांदी के बनाये। जो भी चीज जिसके पास थी उसी के उन्होने ईश्वर बना लिये और फिर उन्हे खिलाना पिलाना शुरू किया। लेकिन वे तो खाते नही। अब आश्चर्य में पड़े है कि हमने इन्हें खिलाने पिलाने के लिये बनाया था लेकिन वे तो खाते नही। कोई हम जैसा आदमी देख रहा था, आकर उसने पूछा कि अन्दर क्यों खड़े हो? क्यों ताज्जुब में खडे हो? कहने लगे, साहब हमने इनकी सेवा करने के लिये इनको बनाया था। अब इनको खिलाते-पिलाते है तो यह खाते नही, हम इनकी सेवा के सामान लाये थे। लेकिन यह तो खाते ही नही। वह सज्जन बोले, जरा सोचिये, विचार किजिये। आपने इनको किनकी जगह बनाया है, किनकी जगह मुकर्रिर किया है? उन लोगों ने उत्तर दिया, 'भगवान के स्थान पर। ' प्रश्न किया गया ' क्या भगवान खाते है? उत्तर मिला, नही, ' भगवान तो नही खाते है। तो उस आदमी ने कहा कि जब भगवान खाते नही है तो वे इतने बेशर्म तो नही है कि भगवान जो खाता नही है उसकी जगह मुकर्रर होकर खुद खाने लगे। कैसे खा लें? उन्होने कहा हम भी नही खाऐंगें। इतनी गैरत तो हम में है। इनको समझाना पड़ा।

बुद्धिवादियों ने इन्हे समझाया कि आपने सारा काम उल्टा कर दिया। जिसने सारे जगत को बनाया उसे तुमने बना दिया। सारा काम उल्टा हो गया। जिस बाप ने हमें बनाया था हमने उसे बना दिया। जो सर्वत्र था वह एकत्र हो गया, जो गैर महदूद था वह महदूद हो गया। जो आजाद था वह कैद हो गया, बन्धन में आ गया। आप पूछेगें बन्धन में कैसे आ गए?

आप देखते है कि बड़े-बडे सेठों ने मन्दिर बनवा रखे है या उनके बडे-बडे मकान है। उनमें एक कौने में उन्होने मन्दिर बनवा दिया है

उन मन्दिरों में देवता रखे हुये है अर्थात् परमात्मा सब जगह था। अब एक-एक मकान में मुकैयद हो गया। मकान के अन्दर रहता है तो उस मकान से छोटा ही होगा। जो वह सर्वत्र था अब एकत्र हो गया। वह मकान जिसमें स्वयं रहते है बडा अच्छा है खूब ऊँचा है। उसमें सभी तरह के आराम है। भगवान जी के लिये सेठ जी ने इतना छोटा मकान बनवाया है कि पुजारी जी भली प्रकार खड़े भी नही हो सकते है, झुके-झुके ही अपना कार्य कर देते है। अगर कोई आकर पूछे कि यह किसका मन्दिर है।तो कहा जायेगा कि यह मन्दिर सेठ जी का है। और यह देवता ? यह भी उन्ही के है- तो जो मालिक था, सबका स्वामी था अब हम उसके स्वामी हो गये। काम उल्टा हो गया न? मन्दिर भी सेठ जी का और उसमें जो भगवान है वह भी सेठ जी के। अब सेठ जी अपने भगवान की पूजा भी करते है और उसकी रक्षा भी करते है। शाम को हमेशा ताला लगा देते है। कभी कोई उठाकर न ले जाए। जो सारे जगत का रक्षक था अब हम उसके रक्षक बन गये। मैने यह सब बात इसलिये कही है। कि एक सही नक्शा आपके सामने आ जाय । अब पुजारी और सेठ जी की मर्जी प्रधान है जब चाहें मन्दिर खोले, जब चाहें बंद कर दें, खाना चाहें एक दिन में एक बार खिलायें और चाहे चार बार। भगवान अब कोई शिकायत नही कर सकते क्योकि सेठ जी की रिआया या प्रजा में शामिल हो गये है। वह मालिक के सामने कैसे बोलें? हमारी ना-समझी से काम करने पर कितने काम बिगड़ गये?

मैं दिल्ली मे बाबू सुन्दरलाल जी अहलूवालिया के घर में किराये पर रहा करता था। उसका एक मन्दिर भी था। उसमें जो पुजारी जी थे वे मेरे मित्र थे और करीब ही रहते थे। आप जानते है मित्रों में हंसी की बात हुआ करती है, हमारी भी होती थी तो वह कह दिया करते थे कि हां, आप कह लिजिये हम सनातन धर्मी है और आप आर्य समाजी है । मैने उनसे एकबार कहा कि आप ईमानदारी से बताइये कि क्या यह ठीक तरीका है? वह कहने लगे, "पंडित जी, ठीक तरीका क्या है यह

तो आप भी जानते है और मैं भी जानता हूँ कोई फर्क की बात नहीं है।

एक दिन वह शाम को अपने बेटे ऋषि को आवाज लगाकर यह पूछ रहे थे कि रात होने वाली है तूने मन्दिर का दरवाजा बन्द किया है कि नही? उससे नकारात्मक उत्तर सुनकर वे नाराज हुये और बोले कि तूने अभी तक दरवाजे बन्द नही किये, यदि कोई ठाकुर जी को उठाकर ले जाये तो आज तक कभी गये हुये वापस आये है? मैने जरा हंसी कर दी। मैने कहा, 'कभी आपने इनको गली-कूचे में घूमने का मौका दिया है? गली कूचे में घूमने वाले को अपने घर का पता ज्ञात रहता है। ठाकुर जी बेचारों को क्या पता? वे तो आज तक कभी बाहर गये ही नही। तो उन्हे अपने घर रास्ते का कैसे पता चले? इसलिये एक बार जाने के बाद वे आज तक लौटे नही।' हंसने लगे। हंसते हंसते कहने लगे- पंडित जी खैर और बाते तो छोडिये जन्माष्टमी आने वाली है जरा लाला जी से कह दीजिये कि ठाकुर जी के कपड़े बनवा देवें। मैं कहता हूँ तो नाराज होने लगते है। आप उधर से जब निकले तो जरा कह दिजिये । पडौसी का इतना तो लिहाज होना चाहिये। मै जब लाला जी के मकान के आगे से गुजरा तो वे बैठे हुऐ थे। मैने उनको याद दिलवाया कि आप अपने कपड़े जब बनवाते है तो ठाकुर जी का ख्याल रखा किजिये। कहने लगे, आपको पुजारी जी ने कहा होगा। मैने कहा, हॉ, पुजारी ही कह सकते है। ठाकुर जी की क्या मजाल जो वह कह सके। वे तो आपकी प्रजा में शामिल है। मालिक के सामने बंदा कही बोल सकता है? कहने लगे, अच्छा हो जायेगा इन्तजाम। मैने कहा, जन्माष्टमी से पहले ही हो जाना चाहिये। यह घटनाए मैं आपको क्यों बता रहा हूँ? केवल इसलिए कि आपको यह पता चल जाय कि गलत विश्वासों और गलत तरीकों से कितना नुकसान हो रहा है। जो हमारा रक्षक था, अब हम उसके रक्षक है। वह हमारी कैद में है। जो हमारा पोषक था अब खाने के लिये हमारा इन्तजार कर रहा है, वह हमारा मोहताज हो गया है।

एक भजनीक महाशय थे। अपने भजनों के बीच कह रहे थे कि मुसलमानो का खुदा खुदाबन्द ताअला और हिन्दुओं का जो मन्दिर में रखा हुआ है। तालाबन्द खुदा है। मैन यह बात सुनी थी, मुझे अच्छी लगी इसलिये आपको भी सुना दी। उनकी यह बात सही थी। मन्दिर को अपनी ईश्वर की रक्षा के लिये उसमें ताला लगाना पड़ता है।

दिल्ली में एक बार जाटों के मुहल्ले में गाय निकालने के प्रयत्न में झगडा हो गया। कसाई लोग जाटों के मुहल्ले में गाय निकाल कर ले जाना चाहते थे। लोटन सिंह वगैरह जाट थे लोग लाठियां लेकर खडे हो गये और कह दिया कि हम अपने मौहल्ले से गाय को नही निकालने देगें। झगडे का इम्कान देखकर डिप्टी कमिश्नर ने उन्हे अपने जुलूस का रास्ता बदलने को कहा। इस पर वे लोग नाराज हो गये। और उन्होने मुहल्ले में घुसकर लूटमार करनी शुरू कर दी। वे एक मन्दिर में घुस गये और जितने भी देवता वहां रखे थे सब तोड़ डाले। मन्दिर में पुजारी भी था। वह डर के मारे, कौने में एक लिपटी हुई चटाई थी, उसमें घुस गया। किसी को कुछ भी पता न चला। जब वे लोग सभी मूर्तियां तोडकर चले गये तो पुजारी भी बाहर निकल आए। बाद में मैं जब उनसे मिला तो मैन पूछा कि भगीरथ जी तुम कहां थे जब मन्दिर में वे लोग मुर्तिया तोड़ रहे थे? कहने लगे कि मैं मन्दिर में ही था। कौने में चटाई रखी थी लिपटी हुई, उसमें घुस गया था इसलिये बच गया। नही तो वे लोग मुझे मार डालते। वे तो मारने पर तुल हुये थे, गुस्से में थे। मैने उनसे पूछा कि तुम्हे उस समय सबसे ज्यादा चिंता किसकी थी? मुझे अपने बेटे की थी कि न जाने कहां है? (उसका बेटा आजकल अलवर राज्य में मजिस्ट्रेट है।) मैने पूछा कि तुम्हे देवताओं के टूट फूट जाने का कोई गम नही है? कहने लगे अजी वह तो जयपुर से फिर आ जायेगें, कोई रूपये का, कोई चार रूपये का, कोई आठ का, लेकिन मेरा बेटा कहां से आ जाता? अब जरा सोचने की बात है असलियत निकल आई कि नही। भगवान घड़े-घडाये पड़े है, दो रूपये, चार रूपये के बिक रहे है। हमने इस प्रकार भगवान की

बेइज्जती की तो आज हमारी भी बेइज्जती हो रही है। यह भगवान की पूजा का तरीका नही है। हमने गलत तरीके प्रयुक्त किये हैं। मैं आगे चलकर आपको ईश्वर पूजा का सही प्रकार बताऊंगा।

मैं मेरठ में व्याख्यान दे रहा था तो एक नवयुवक खडे हो गये और कहने लगे कि मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ। मैने कहा, नियमानुसार व्याख्यान के बाद प्रश्न पूछे जाते है, तभी आप पूछ लिजिये। वे कहने लगे, जी तो प्रश्न पूछने का अभी कर रहा है। मैने कहा, 'अच्छा पूछिये'। पूछने लगे, 'आप ईश्वर को हर जगह मानते है या नही? मैने कहा हां मानते है।'

प्रश्न : तो मूर्ति के अन्दर भी हुआ कि नही?

उत्तर: हां मूर्ति के अन्दर भी है और बाहर भी।

प्रश्न: तो आप मूर्ति का खण्डन क्यों करते है।

उत्तर: हम मूर्ति का खण्डन नही करते। हम तो गलत मूर्ति पूजा का खण्डन करते है।

प्रश्न: जब भगवान मूर्ति के अन्दर है तो आप मूर्ति पूजा का खण्डन क्यों करते है?

उत्तर: आपके मूर्ति पूजने का उददेश्य भगवान की पूजा करना है। जब भगवान सब जगह है तो मूर्ति के अन्दर वाले भगवान को ही क्यों पूजते है? मूर्ति के बाहर वाले को क्यों नही पूजते?

भगवान तो सब जगह है। मूर्ति के अन्दर भी और बाहर भी। मान लिजिये आप मुझसे मिलने आए और मैं आपको अपने दरवाजे के बाहर ही मिल जाऊं तो आपको मुझसे मिलने में अधिक सुविधा होगी या मेरे अन्दर होने पर होगी?

क्योकि भगवान तो सब जगह है उससे बाहर ही मिल लीजिए।

व्यर्थ में अन्दर वाले के क्यों पीछे पडे है? आप मूर्ति में दाखिल नही हो सकते और मूर्ति का खुदा बाहर नही आ सकता। क्यों मुश्किल में पडते है सरल काम किजिये और मूर्ति से बाहर वाले की ही पूजा कर लिजिये।

दूसरी बात यह है कि मूर्तिपूजा करने से तो मूर्ति की पूजा होती है। भगवान की पूजा नही होती । वह तो सर्वज्ञ है। इसलिये उसे बाहर आने जाने की आवश्यकता नही है। मैं इसके खिलाफ नही हूँ कि आप ईश्वर की पूजा करें किन्तु आप ईश्वर की पूजा करते कहां है? आप तो मूर्ति को पूजते है, उस पर फूल चढाते है, पानी डालते है, क्या पानी और फूल में भगवान नही है? प्रश्नकर्ता ने उत्तर दिया 'हाँ है।' और उसको बनाया किसने है? कि 'भगवान ने' तोमैने कहा कि 'फूल की कीमत दुगनी हो गयी। फूल को बनाया भी भगवान् ने है और उसके अन्दर वह व्यापक भी है। किन्तु मूर्ति में व्यापक तो है परन्तु भगवान ने उसे बनाया नही है। तो मूर्ति से अधिक महत्वपूर्ण फूल है। आप आठ आने पर रूपये चढा देते है। आपको अपनी मूर्तियां जो (आठ आने के समान मूल्य वाली है।) उन्हें फूलों पर जो (एक रूपये के समान मूल्यों वाले है।) चढाना चाहिये। आप तो कम कीमत चीजों पर मंहगी चीजें चढा रहे है। कहने लगे, 'इससे तो सब उल्टा हो जायेगा।' मैने कहा कि उल्टा नही सुल्टा हो जायेगा। उल्टा तो अब है। क्या यह भगवान की पूजा हो रही है? मैं कहता हूं यह पूजा नही हो रही बल्कि भगवान का मजाक बनाया जा रहा है।

मैं मानता हूँ कि कृष्णचन्द्र जी ऊंचे दर्जे के आदमी थे। उन्हे अवतार कह लिजिये मुझे इसमें भी ऐतराज नही है। रामचन्द्र जी के बारे में भी यही बात है। उन्हे भी आप अवतार कहिये। यदि वे ऊंचे और श्रेष्ठ पुरूष थे तो आप उनके गुणों से लाभ उठाइये। लिखा है एक अंग्रेजी कवि ने-

Lives of great men all remind us.
That we can make our lives sublims.

And departing leaves behind us,
The footprints on the sand of time.

बड़े-बड़े लोगो का जीवन हमें याद दिलाता है। कि हम भी अपने जीवन को उच्च बना सकते है। और दुनिया से रूख्सत होते वक्त जमाने की धूलि पर अपने पैरों के निशान छोड जाएं ताकि लोग उस रास्ते पर चल सकें।

तो यदि आप कृष्णचन्द्र जी की मूर्ति रखते है तो दो बनवाइये। एक मुझे दीजिये और एक आप रखिये। देखिये मैं उस मूर्ति को झाड़-पौछकर साफ रखूंगा और उनके जीवन से कुछ सीखूंगा जिनकी वह मूर्ति है।

रामचन्द्र जी है। उनकी मूर्ति घर में रखने का क्या लाभ। रामचन्द्र जी के चरित्र से वह मोटी पुस्तक रामायण भरी पडी हुई है। रामचन्द्र जी ने अपने पिता की आज्ञा मानी । आज्ञा मानकर वन चले गये। तो मैं अपने बच्चों को सीखाऊगां की वे अपने माँ-बाप की आज्ञा मानें। मेरे पिताजी तो मर गये। इसलिये मैं अपने बच्चों को ही सीखाऊंगा। उन्हे यह बताऊगां कि रामचन्द्र जी के पीछे चलने का क्या अर्थ है। पीछे चलने का यही अर्थ है कि उनके गुणों को धारण करो।

कृष्ण चन्द्र जी के लिये भी यही बात है। कितने बडे विद्वान थे। कैसे बडे नीतिवान और बलवान् थे। तीनों गुण उनमें थे। हमको भी अपने अन्दर ये चीजें धारण करनी चाहिये। उन्होने छोटे- छोटे मांडलिक राजाओं को मिलाकर एक महाभारत बना दिया था। आज भारत के टुकडे होते चले जा रहे है। आप न होने दिजिये इन टुकडो को । उनके चरित्रों को सीखिये पीछे चलने का यह अर्थ नही है कि आप नाचने लगे। किसी को राधा बना लें और उसके साथ नाचे। यह कृष्ण का चरित्र नही था।

यह बात कही जाती है तो लोग नाराज हो जाते है। क्या यह नाराज होने की बात है? कृष्ण जी क्या नचनिये थे? हर्गिज नही। वह आप्त

पुरूष थे। योगी थे। लोगों ने सोचा समझा नही। उसी का दुष्परिणाम आज देख लिजिये। क्या नाच की कोई कमी है? आज तो हमारी सरकार के बडे से बडे नेता नाच के हामी है। हमारे नेहरू साहब भी नाचते है। लोग कहा करते है। नचनिये का राज्य हो रहा है। लोग कहते है हमें सुनना पडता है। प्रत्येक सांस्कृतिक समारोह में नाच पहले होता है। नाच ही सब जगह प्रधान है। यह नाच नही नाश हैं जो हो ही रहा है।

राज्य नाच से कायम नही रहते। मैं कहता हूँ, बुद्धिमान सारे कहते है और इतिहास इसकी पुष्टि करता है। राज्य बलवान और नीतिवान पुरूष किया करते है। तो कृष्ण जी के चरित्र के अनुसार अपना राज्य बनाइये।

चित्र के बारे में एक बात यह विशेष कहनी है। कि किसी के भी चित्र में उनके सारे चरित्र नही आते। क्या जो कृष्ण जी का चित्र घर में लगा है उसमें कृष्ण जी के सारे चरित्र चित्रित है? या क्या किये जा सकते है। क्या स्वामी दयानंद जी का सारा चरित्र एकचित्र में आ जाता है। नही न? कोई भी चित्र ऐसा नही है जिसमें चित्रित व्यक्ति का सारा चरित्र आ जाए। तो चित्र से व्यक्ति को याद करके उसके चरित्र जानने की उत्कंठा होती है और फिर चरित्र जानकर अपने को वैसा बनाने की इच्छा तो कृष्णचन्द्र जी के जीवन से शिक्षा लेकर भारत की उन्नति करे। रामचन्द्र जी के चरित्र को भी ध्यान में रखे। आज भाई-भाई आपस में छोटी-छोटी बातों के लिये लडते फिरते है। किन्तु राम ने अपने छोटे भाई भरत के लिये सारे अयोध्या के राज्यों को ठोकर लगा दी। तो आप राम की तरह से भाई के लिये त्याग करना सीखे। अगर राम के चरत्रि का हम पर इतना भी प्रभाव न पड़ा तो रामायण के पाठ का क्या लाभ?

इन सब बातों से आप अन्दाजा लगाइये कि मैं कहां तक आपके साथ हूं। जितनी बात बुद्धिपूर्वक होगी मैं आपके साथ-साथ वहां तक

मानूगां। आगे मैं नही मानूगां। तो राम और कृष्ण कीसच्ची सेवा यह है कि आप उनके चारित्रिक गुणों को मानकर अपने गुण भी वैसे ही बनाने का प्रयत्न करें, वैसे ही गुण धारण करें। यदि आप उनके ऊपर जलेबी रखने लगें, लड्डू रखने लगें या उन पर पानी डालने लगें तो यह उनकी पूजा नही है, न यह उनकी सेवा है। गुणों का धारण करना ही उनकी सेवा है।

मैं आपको अपने जन्म स्थान (नीमच छावनी) की बात सुनाता हूॅ। वहां जब लोग मन्दिरों में जाते है। तो मन्दिर में घुसने से पहले वहां लटका हुआ घण्टा बडी जोर से बजाते है। और घण्टा बजाकर बोलते है। 'भेज 56 करोड़ की चौथाई' अर्थात् 14 करोड भेज। मैन उनसे पूछा, 'भाई तुम सीधे से 14 करोड़ क्यो नही मानते? छप्पन करोड़ की चौथाई क्यों कहते हो? बोले! अजी घण्टा तो ये बजाते है कि महादेव जी नशे में रहते है जरा जाग जायें, नशा कम हो जाए और वे हमारी बात सुन लें। छप्पन करोड की चौथाई यों कहते है कि वे भोले है उन्हे याद तो कुछ रहता नही है। छप्पन करोड़ ही याद रहेगा चौथाई याद नहीं तो छप्पन करोड ही दे देगे।

देखा आपने इन भक्तों को ? अपने भगवान् को भी धोखा दे रहे है।

एक शख्स है जिसका कोई रिश्तेदार है और वह गुजर गया है। डाक्टर की दवाई जो उनके लिये लाई गई थी वह भी रखी हुई है। आप जानते है। लोग यथाशक्ति अपने मरीज को बचाने की सारी कोशिशें करते है। डाक्टर के यहां से लाई हुई दवा में से खुराक बाकी थी। वह रखी रही। मरीज गुजर गया है। मुहल्ले में सूचना भिजवा दी गई कि हमारे अमुक रिश्तेदार गुजर गये है। श्मशान भूमि में उन्हे लोग ले जानें के लिये इक्ठठा हो गये। जब उनको अर्थी पर रखा गया तो दवा ले आये और लाकर उनके मुंह में डालने लगे। तमाम लोग चिल्ला उठे कि, 'बेवकूफ तेरी अक्ल मारी गयी है। अब तो ये मर गये, मुर्दा है अब

दवाई पिलाने का क्या लाभ? बोला, 'मै लाया तो इन्ही के लिये था। ' लोगो ने कहा, 'लाया तो इन्ही के लिये था लेकिन अब तो मर गये। जिन्दा तो है नही तू इन्हें अब क्या दवाई पिलाता है? अब क्या ये दवाई पी लेंगें? फिर वह बोला, 'यदि ये नही पीते तो आप लिजिये, दवा के पैसे तो वसूल होने ही चाहिये। लोग कहने लगे कि तू बडा मूर्ख आदमी है। हम दवाई क्यो पी ले हम कोई बीमार है। जो दवाई पीवें,? तो उसने कहा इसलिये पिला रहा हूँ आप पिलाने क्यों नहीं देते इन सब बातों को मान लिजिये कोई आर्य पुरूष सुन ले और यह कह दे कि जो दो-चार घण्टे पहले जिन्दा था और अब मर गया है उसे दवाई पिलाने वाले को तो आप बेवकूफ बता रहे है। जो कभी जिन्दा थे ही नही, प्रारम्भ से ही मन्दिर में पत्थर के रखे है, उन्हे जो लोग खिलाते पिलाते है, और लड्डू पेड़े चढाते है वे कितने बडे बेवकूफ होगे। इसको Rule of Three से समझदार लोग लगा लें। अक्ल व हिसाब वाले ही सोचें और विचारें। भगवान् की उपासना क्या लड्डू और जलेबी चढाने से होती है? नही! बिल्कुल नही! यह उपासना का तरीका नही है!!!

मूर्ति के रखने में कोई हर्ज नही। मैने पहले भी कहा था कि आप दो मूर्तियां बनवाएं एक स्वंय रखें और एक मुझे दें। कह दिजिये लोगों को कि एक मूर्ति रामचन्द्र ले गया। लोग मुझसे पूछगे क्ि क्या करते है आप कृष्ण की मूर्ति का? मैं उत्तर दूंगा कि मूर्ति देखकर मै उनके चरित्र याद करता हूँ कि उन्होने कितना बडा काम किया, कितने बडे विद्वान और नीतिवान् पुरूष थे जो सारी सभा में वे ही प्रधान चुने गये। इसलिये हमको भी ऐसा ही बनना चाहिये। मैं यह नही सीखूंगा कि उसके ऊपर लड्डू जलेबी चढाने लगूं कि चिडियाएं आएं और उन्हे खा जायें, सारी मूर्ति को खराब कर जाये। जिन लोगों ने यह तरीका अख्तियार कर रखा है कितना गलत काम किया है इसका कोई अन्दाजा हो सकता है? यह सरासर लोग भूल किये जा रहे है। ईश्वर की ऐसे पूजा नही होती।

एक साहब ने मुझसे पूछ लिया कि 'पण्डित जी आप अपने वालिद साहब की तस्वीर को क्या समझते है? मैने कहा, 'इतना इसमें और जोड़ दिजिये कि जिसको मैने ही खींचा हो। मैने उत्तर दिया, 'क्योकि तस्वीर मैने बनाई है इसलिये मैं तस्वीर का बाप हूॅ। तस्वीर का कर्ता मैं हूॅ इसलिये मैं तस्वीर का बाप हूॅ । जो चीज मुझसे उत्पन्न हुई है। वह मेरे बच्चे की जगह तो है ही। उत्तर का सुनकर कहने लगे कि 'हॉ, उत्तर तो ठीक हो गया।

तो मैने निवेदन किया कि आप मूर्तियां रखें यदि रखना चाहें तो। किंतु ऐसे रखे जैसे मैंने बताया है। कोई हर्ज नही है। मैं तो इनकी आवश्यकता नही समझता। यदि आप समझते है तो अवश्य रखे और अपना चरित्र उन जैसा बनाये तभी कुछ लाभ होगा। वैसे कभी एक ही चित्र में सारे चरित्र प्रकट नही किये जा सकते। आज तक हर प्रकार के चित्रण में कोई सफल नही हुआ है। तो चित्र को देखकर जिनका वह चित्र है उनके शुभ गुणों को धारण करने का प्रयत्न करे।

बहुत से लोग मूर्तियों के सामने नाचते है, गाते है। उनके सामने हाथ जोडते है। मूर्तियों में ज्ञान कोई नही है तब भी वह करते है। मान लिजिये कक्षा में कोई मास्टर सो रहा हो। और कुछ लडके उन सोते हुओं से छुटटी मांगकर चले जाते है, कोई पेशाब करने चला गया, कोई पानी पीने। जब लड़के लौट आये, तो मास्टर ने पूछा, 'तुम कहां गये थे' लड़के बोले जी आपसे पूछकर पानी पीने गये थे। कोई बोला पेशाब करने गये थे। मास्टर ने पूछा, 'कब पूछकर गये थे? लडको ने उत्तर दिया जब आप सोये हुये थे, मास्टर ने सभी को ताडना की और कहा कि बेवकूफ वह इजाजत लेने का समय था? हम तो सोए थे। हमें क्या पता क्या हो रहा है? खबरदार अब कभी भी ऐसे मत जाना। तब वे मूर्ति जो बेजानदार है उनके ऊपर हाथ जोडने या नाचने का क्या असर हो सकता है? उनके सामने यह क्रियाएं करना फिजूल है उसका कोई लाभ नही है।

सच्ची उपासना क्या है यह अब मैं आपकी सेवा में वर्णन करूंगा जरा ध्यान से सुनिए :

मैने आपको अपने व्याख्यान के पूर्व भाग में बताया था। (चेतनों में) परमेश्वर और (जड़ पदार्थों में) प्रकृति बिल्कुल पूरे है, इन्हें किसी चीज की आवश्यकता नही है।

प्रकृति कहती है यदि तुम मुझसे फायदा उठाना चाहो तो उठा लो। मेरा सही प्रयोग करो तो तुम्हें लाभ होगा । यदि गलत तरीके से मेरा प्रयोग किया तो हानि होगी। मान लिजिये चूल्हे के पास कोई देवी खाना बना रही है। यदि वह देवी फूहडपन से काम करेगी, उसके कपड़े फैले होगे। तो आग लग जायेगी। और वह खाना बनाने वाली जल जायेगी। या जलकर मर जायेगी। क्योकि आग जरा भी लिहाज नहीं करेगी और जला देगी। अग्नि एक प्राकृतिक पदार्थ है। और उसका ठीक प्रयोग नहीं किया गया इसलिये उससे हानि हुई। प्राकृतिक पदार्थ अपने को नहीं जानते तो वे जीवात्मा से कहते है कि तुम्हीं सोच समझकर लाभ उठा लो हमें कुछ पता नहीं है।

अब भगवान् के बारे में भी विचार कर लिजिए। वह भी पूर्ण है। उसे भी किसी चीज की आवश्यकता नही है। He needs nothing for himself. वह तो आवश्यकता से खाली है। He is Perfect वह पूर्ण है। तो अब प्रश्न यह है कि पूजा कैसे की जाये? उसकी खिदमत या सेवा कैसे की जाये?

भगवान की पूजा, सेवा या खिदमत का तरीका यह है कि जो ईश्वर के गुण है, जिनके धारण करने से आदमी का उत्थान हो सकता है, उन्नति हो सकती है अथवा परमात्मा से मिलकर श्रेष्ठ हो सकती है, उन गुणों को अपने अन्दर धारण करें और अपने को ईश्वर-सा अर्थात् ईश्वर के गुणों से युक्त बनाने का प्रयास करें।

ईश्वर के गुणों का वर्णन विस्तार से वेदों और शास्त्रों में किया है

उन्हे वहां से जानकर अपनाएं यहां उसके वर्णन की आवश्यकता नही है।

जीवात्मा के अन्दर ग्रहण करने की योग्यता विद्यमान है। जीवात्मा ईश्वर के गुणों को ग्रहण करने की क्षमता रखता है। वह दयालु बन सकता है, न्यायकारी भी बन सकता है। प्रात: और सांय सन्ध्या करके, बनने की चेष्टा करें। और अमल भी वैसा ही करे।

सन्ध्या क्या है? Introspection है। आत्म-निरीक्षण है। प्रात: और सायं अपना आत्म-निरीक्षण करिये। देखिये कि जीवन के दैनिक व्यवहार में कहां कहां कमी है, उन्हे निकालिये और ईश्वर के गुणों को धारण कीजिये।

लोग कहां करते है, जी ! बगैर मूर्ति या चित्र के गुणों को कैसे याद करें? यही तो विचारणीय चीज है। गुणों को याद करने के लिये चित्र की आवश्यकता नही है। अभी आपकी समझ में यही बात एक उदाहरण से आ जायेगी। आप जितने भी यहां बैठे है भली प्रकार से जानते है। आजकल बेईमानी, बदनामी, छली का अत्यन्त जोर है, प्रत्येक आदमी दूसरे को ठग करके अपना मतलब सिद्ध करना चाहता है। इससे किसी को भी इन्कार नही है। सब लोग इन बुराईयो से परिचित है। जब खूब परिचित है तो क्या बेईमानी या चोरी का चित्र खींच सकते है।? नही खींच सकेगें। दुनिया का बडे से बडा चित्रकार भी चोरी या बेईमानी का चित्र नहीं खींच सकता है। और न बना सकता है!! जब इनकी तस्वीरे नही खींची जा सकती और बिना तस्वीरों के आप इन्हें जानते है। क्योंकि यह जहनी चीजें है, बुद्धि से जानने की चीज है। बुद्धि से सोची और विचारी जाती है। किसी के माल को बगैर उसकी इजाजत के अपने तसर्रूफ में लाना चोरी है, इसकी तस्वीर नहीं खींची जा सकती है। इस कागज पर कोई तस्वीर नही खींची जा सकती है। किंतु दिमाग में तो खींची हुई है आपने समझ लिया है चोरी को, कि चोरी यह है। अर्थात् गुणों को बगैर तस्वीर के जान लेने की

जीवात्मा में योग्यता है। गुणों को हम जहनी नक्शे से जान लेते है। बेईमानी या ईमानदारी, बदकारी और जिनाकारी सब पहचानी जाती है। तो ठीक इसी तरह परमात्मा के गुणों को भी जहनी नक्शे से जाना या पहचाना जा सकता है। परमात्मा कैसा है? न्यायकारी है। किसी के साथ रिआयत नहीं करता चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो There is no respect of persons with God. परमात्मा किसी भी शख्सियत से प्रभावित नहीं होता चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो क्योकि वह सर्वशक्तिमान है। वह तो जैसा कर्म कोई करेगा उसको वैसा ही दण्ड देगा।

भगवान के इन गुणों का आप धारण करें। जहां इंसाफ का मुआमिला आ जाय डरें नही, घबरायें नहीं, अभियुक्त की शख्सियत से प्रभावित न हों बल्कि साफ कहें कि अमुक व्यक्ति दोषी है। नौशेरवां आदिल अपने न्याय के लिये प्रसिद्ध थे। क्योकि उसने अपने बेटे को भी नही छोड़ा, फांसी पर लटका दिया। यहां पर कौम का सवाल नही है। यहां पर तो नेकी और गुणों से मतलब है चाहे किसी भी धर्म का हो। भलाई सब जगह भलाई ही है।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि ईश्वर के गुणों को ध्यान करने के लिये मूर्ति की आवश्यकता नही है और यदि मूर्ति से ध्यान एकाग्र करने की आदत पडी हुई है तो अपने पुत्र या पुत्री को सामने बिठाकर उनके द्वारा ध्यान क्यों नहीं एकाग्र करते? वह तो बडी कीमती चीज है। उसमें ध्यान एकाग्र किजिये। ईश्वर के लिये बनाया हुआ है आपका पुत्र जिसके लिये आपको प्रत्येक क्षण चिंता बनी रहती है कि रोगी न हो जाय। तो उसी में अपने मन को केन्द्रित कर दिजिये। यदि आप उस बच्चे के बारे में एक अंग के बारे में भी सोचेंगे। तो भगवान की कारीगरी की थाह ना पा सकेगें। मूर्ति में ध्यान केन्द्रित नही होता बल्कि खयाल मुन्तशिर हो जाता है। कभी आखं में, कभी कान में, कभी कहीं और कभी कहीं। तो मूर्ति में मनुष्य का ध्यान केन्द्रित हो ही नही

सकता।

ध्यान का लक्षण करते हुये लिखा है, 'ध्यानं निर्विषयं मनः मन के निर्विषयं होने को ही ध्यान कहते है अर्थात् ध्यान तभी होता है जब मन में कोई विषय न हो। रात को सोते समय यदि चिंताएं होती हैतो नींद नहीं आती और चिन्ताएं दूर होते ही नींद आ जाती है। यह पता भी नहीं चलता कि नींद कब आ गयी। इसी प्रकार ध्यान भी तभी होता है। जब मन विषयहीन हो जाय। मैं नहीं कह रहा हूँ। सांख्य के रचयिता कपिल मुनि ने लिखा है। यदि मन में विषय आ गए तो मनुष्य विषयों के विचार में फंस जायेगा। जैसे मनुष्य कभी बहुत खुब सूरत शक्ल देखने के बाद कभी उसकी आंख के बारे में सोचता है, कभी नाक के बारे में, कभी बालों आदि के बारे मे। इस प्रकार विचारों की श्रंखला चल पडती है। मन में मूर्ति का ध्यान रखने से मन उसमें केन्द्रित नही होता बल्कि अस्थिर हो जाता है, ध्यान बहुत चीजों मे बंट जाता है। इसलिये मूर्ति को सामने रखने से भगवान् का ध्यान कभी नही हो सकता।

अपना मन भगवान के गुणों पर केन्द्रित करो, खूब गहराई से विचार करो उन पर, और फिर उनके जैसा अपने को बनाने का प्रयत्न करो। उपर्युक्त उदाहरणों व स्पष्टीकरणों से मैने ईश्वर पूजा के लिये मूर्ति की अनावश्यता प्रकट की है।

सेवा कैसे की जाय ? कोई चीज उसे देकर उसकी पूजा हो सकती है? मैने आपको अपने व्याख्यान में बताया कि ईश्वर और प्रकृति दोनों पूरे है। इन्हे किसी भी चीज की आवश्यकता नही है। तो इन दोनो की सेवा इन्हे कोई चीज देकर नही होगी बल्कि अपने लाभार्थ वस्तुएं इनसे प्राप्त करके इनकी सेवा होगी। अपूर्ण की सेवा, उससे कुछ लेकर व उसे कुछ देकर होती है। और पूर्ण की सेवा उससे कुछ (अपने लाभ के लिये व उन्नति के लिये जितना जरूरी है) लेकर हुआ करती है।

मुझसे, जो मेरे पास ज्यादा है उसमें से ले लिजिये। और जो मेरे पास नही है, आपके पास है वह मुझे दे दिजिये। मेरा काम तो ऐसे ही

चल रहा है। क्योकि मैं अपूर्ण हूँ पूर्ण नही हूँ। तो मुझमें जो ज्यादा है लोग मुझसे ले लेते है। और जो अन्यों में ज्यादा है मैं अपनी आवश्यकतानुसार ले लेता हूँ। अभी मैने एक गाना इन भजनीक महाशय से ले लिया क्योकि इनके पास था और मेरे पास नही था। यदि मेरे पास कोई चीज हो उसके पास न हो तो वे मुझसे ले लें। तो मेरा काम लेने -देने से चलेगा। किंतु भगवान का काम लेन-देन से नही बल्कि केवल उससे लेने ही लेने से चलेगा। क्योकि वह पूर्ण है। और उसके पूरेपन में कोई फर्क नही आता। वह सबको दिये जा रहा है। क्यों दे रहा है? वजूद को सफल कर रहा है। यदि उसका वजूद निरर्थक हो तो वह निकम्मा साबित होगा। इसलिये परमात्मा कैसा है वह बाकार है। तो परमात्मा की सेवा हम उससे कुछ लेकर करेगे।

यदि हम उसे कुछ देना चाहे तो भी क्या दें,? उसके पास तो सारी चीजें है। वह अपार भण्डार (प्रकृति) का स्वामी है यदि चाहें तो भी हम उसे कुछ दे नही सकते क्योकि हमारे पास अपना है क्या जो देंगे। इसलिये भगवान से हम उसके गुण ग्रहण करके ईश्वर की पूजा कर सकते है।

प्रकृति से भी हम ले रहे है,लेते आए है। आज की आधुनिक साज-सज्जा की सामग्री, रेडियो, ग्रामोफोन, टेलीविजन, रेलगाड़ी, हवाई जहाज आदि सभी प्राकृतिक पदार्थ है जो हमने प्रकृति से प्राप्त किये है।

प्राकृतिक वस्तुओं के दो प्रकार के प्रयोग या उपयोग किये जा सकते है।

सही उपयोग और गलत उपयोग। यदि हम सही उपयोग करेगें, हमारे लिये वस्तुएं लाभकारी होगी यदि गलत इस्तेमाल करेगें तो हमें हानि हो जायेगी।

गलत प्रयोग के घातक परिणाम होते है। जहर शब्द के लिये संस्कृत साहित्य में 'विष' विप्रयोगे शब्द का प्रयोग होता है। और विष

शब्द का अर्थ है गलत इस्तेमाल, अनुचित उपयोग। किसी भी चीज का गलत इस्तेमाल घातक ही हो सकता है। तो वस्तुओं का गलत इस्तेमाल उनको हलाहल या जहर बना देता है।

जिस चीज का भी गलत इस्तेमाल किया जायेगा वह हमारे लिये जहर होगा। इसी प्रकार यदि भगवान् को ठीक प्रकार हमने न समझा तो वह हमारे लिये बजाय लाभदायक होने के अत्यन्त हानिप्रद हो जायेगा। लोगों ने ईश्वर के समझने में बडी गलती की है। और किये जा रहे है। इस गलत विश्वास और नासमझी ने ऐसों को ही हानि पहुंचाई है। लोग धर्म के नाम पर अब ठगे जा रहे है। और हानि उठा रहे है।

आचार एक शब्द है। उससे पहले अति लगाने से वह अत्याचार बन जाता है। जिस चीज के साथ भी अति होगी वह बिगड जायेगी।

टामस पेन का यह वाक्य कि We can not serve God in the manner we serve those who cannot do without such service. ईश्वर की उपासना का जो ढंग मैने बताया है यह उसी ओर संकेत करना है। मनुष्य की सेवा जैसे की जाती है। वैसे भगवान व ईश्वर की नही की जा सकती। जो लोग ईश्वर की भी मनुष्य की तरह सेवा करना चाहते है वह गलत रास्ते पर जा रहे है। उन्हे उससे कुछ लाभ न होगा। ऋषि दयानन्द ने जब शिव पर चूहें चढते देखे तो उन्हे यही तो ख्याल हुआ कि जो शिव चूहें को अपने ऊपर से नही हटा सकता वह जगत की कैसे रक्षा करेगा? इस ख्याल से सारी आगे की घटनाएं सम्बद्ध है।

तो मैं आपको बता रहा हूँ कि मूर्तियों का सही उपयोग कीजिये, गलत इस्तेमाल छोड़ दीजिये।

मान लिजिये आपका एक बच्चा है। उसके पास एक घडी भी है। आपका बच्चा घड़ी पर चावल रखने लगे, दाल डालने लगे, लड्डू रखने लगे। जलेबिया चढाने लगे, रायता उस पर डाल दें। सब चीज उस पर डालने लगे तो उसे ऐसा करते देखकर क्या करेगें? क्या आप

उसे डाटेगें नही, मना नही करेगे। अरे बेवकूफ घडी बिगाडेगा? क्यों इस पर यह चीजें डाल रहा है? बच्चा उत्तर दे कि पिताजी यह चलती है तो मैं इसे खिला पिला रहा हूँ? क्या हर्ज है? क्या यह कोई खाती है? क्या यह रायता या पानी पीती है जो तू इस पर डाल रहा है।

आप घडी के बारे में तो इतना तर्क कर रहे है। लेकिन मूर्ति के बारे में यह तर्क क्यों नही करते? बुद्धि का प्रयोग हमें दोनों जगह करना चाहिये। जैसे घडी के ऊपर जलेबी चढाना बेकार है वैसे ही मूर्ति के ऊपर कुछ भी चढाना बेकार है। तो मूर्ति के ऊपर कोई चीज चढाने या उसके सामने हाथ जोडने, लेट जाने, या नाचने से न भगवान की पूजा होती है। न धर्म की रक्षा।

हमें ईश्वर व प्राकृतिक दोनों का ही सही उपयोग करना चाहिये। ईश्वर के गुणों को हम धारण करें, और श्रेष्ठ बनें। प्रकृति के पदार्थ का मनुष्यमात्र के भले के लिये प्रयोग करें। प्रकृति का गलत प्रयोग हमें नुकसान पहुंचायेगा। किसी फारसी के शायर ने लिखा है :

अगर सदसाल गब्र आतिश फरोजद,

चूंयकदम अन्दरां उफयद बिसोजद ।

गब्र कहते है आग के पुजारी को। यदि आग का पुजारी सौ साल तक आग को रोशन रखता रहे और एकदम उसमें कूद पड़े तो आग उसे फौरन जला देगी। आग जरा भी लिहाज नही करेगी। आग प्राकृतिक पदार्थ है। उसका गलत प्रयोग किया गया तो उसने नतीजा दे दिया ।

प्रतिदिन लोग अंधविश्वास या यूं कहिये कि नासमझी से काम करने के कारण अपने जीवन से हाथ धो बैठते है । क्या ऐसे लोग गंगा और यमुना मैया की जय बोलते हुये नही चले जाते है जो तैरने की विद्या सीखे भी नही है और नदियों के पानी में घुस जाते है, बडे जोर से गंगा मैया की जय जमुना मैया की जय चिल्लाते हुये लोग चले जाते है? कोई नही रोकेगा ऐसे नासमझ लोगों को। गंगा मैया या यमुना मैया

ऐसे नासमझ लोगों की प्रतीक्षा में है कि वे आये और बिना तैरने की विद्या सीखे मुझमें घुसें। वह उन्हे पानी में ही दबोच लेगी और अपने बेटों, जल जन्तुओं, मछली, कछुओं आदि को खिला देगी। अपने नादान व ना समझ बेटों का वह थोड़ा सा भी लिहाज नहीं करेगी, उन्हें छोडेगी नही। सैकडो बार ऐसे दुःखद समाचार सुने जाते है। कि अमुक युवक डूब गया, इस मुहल्ले का इकलौता बच्चा डूब गया। प्राकृतिक चीजों के दुरूपयोग या ना समझी से किये उपयोगों का यह फल है।

इसके विपरीत यदि कोई कस्साब पशुओं का वध करके आया है खून में सना हुआ है। जमना को मैया भी नही कहता। बल्कि उसे कुछ और ही नाम से पुकारता है, किन्तु तैरने की विद्या जानता है। और उसे जानकर पानी मे घुसता है। तो उसको यमुना या गंगा मैया अपनी छाती पर तैरा देगी। और वह बखूबी पानी में अपने करतब दिखाता रहेगा। कभी चित तैरेगा, कभी पट। गंगा या यमुना उसका कुछ न बिगाड सकेगी।। क्यों? क्योकि वह तैरने की विद्या सीखकर पानी में घुसा है। वह उसका भक्त नही है तो भी नदी उसका लिहाज करती है। परन्तु जो नासमझ श्रद्धालु है, चाहे वह दशाब्दियों से उसके भक्त हों उसके साथ काई लिहाज नही करेगी और उन्हें डुबो देगी।

इसी प्रकार जो ईश्वर की उपासना, बिना उसके गुण, कर्म व स्वभाव जाने, अन्धाधुन्ध करते है उनको किंचित्मात्र भी ईश्वर से लाभ प्राप्त नही हो सकता। कहा भी है बेइल्म नतबां खुदारा शनाख्त। इसलिये ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव से परिचित होकर अपने को लाभान्वित करना चाहिये। यही उसकी उपासना है, पूजा है और यही उसकी भक्ति है।

जड़ मूर्ति से पूजने से तो जड़ता के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त नही हो सकता।

उपासना विधि –

जब उपासना का आरम्भ करना चाहें तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर आसन लगा, प्राणायाम कर बाह्य विषयों से इंद्रियों को रोक मन को नाभि प्रदेश मे वा हृदय, कन्ट नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके परमात्मा में मग्न होकर संयमी होवें।

जब इन साधनों को करता है तब उसका और परमात्मा अन्तकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है । नित्य प्रति ज्ञान विकार बढ़ाकर मुक्ति तक पहुँच जाता है। जो आठ पहर में एक घड़ी भर भी इस प्रकार ध्यान करता है। वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है । वहाँ सर्वज्ञादि गुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करनी सगुण और द्वेष, रूप, रस, गन्ध स्पर्शादि गुणों से पृथक मान अति सूक्ष्म आत्मा के भीतर बाहर व्यापक में दृढ़ स्थित हो जाना निगुणोंपासना कहलाती है।

उपासना का फल :- जैसे शीत से आतुर पुरूष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत हो जाता है वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष दुःख छूटकर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सहृश जीवात्मा के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते हैं इसलिये परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना अवश्य करनी चाहिये इससे इसका फल पृथक होगा परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा, वह पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है? और जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है। क्योकि जिस परमात्मा ने इस जगत के सब पदार्थ जीवों के सुख के लिये दे रखे हैं, उसका गुण भूल जाना, ईश्वर को न मानना, कृतघ्नता और मूर्खता है

-सत्यार्थ प्रकाश से।।

ओउम् शान्ति शान्ति शान्तिः ।।

आर्य समाज और उसके मन्तव्य

आर्य- श्रेष्ठ, कुलीन, और सदाचारी मनुष्य को कहते है।

समाज- मनुष्यों के समूह और सभा को कहते है, अर्थात् ऐसा स्थान या सभा जिसका उदेद्श्य स्वंय सदाचारी बनना और अन्यों को बनाना है।

इसकी स्थापना पांच अप्रैल सन् 1875 को बम्बई में हुई थी जो हिन्दुस्तान का एक बडा नगर है।

इसके संस्थापक व प्रवर्तक का शुभ नाम श्री दयानन्द सरस्वती है, जो आदित्य ब्रह्मचारी थे। सत्यमानी, सत्यकारी व सत्योपदेशक थे। वेद और शास्त्रों के महान् विद्वान थे।

इनके जीवन का उद्देश्य संसार को मिथ्या-ज्ञान, मिथ्या-विचार और मिथ्या विश्वास से मुक्त करके बुद्धि और सत्य के पथ पर लाना था। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होने आर्य समाज की स्थापना की और कई ग्रन्थ लिखे, जिनमें मुख्य सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका और संस्कार विधि है। ऋग्वेद और सम्पूर्ण यजुर्वेद का भाष्य संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं में किया है।

आर्य समाज के दस नियम -

1. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते है उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

2. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा- अनन्त, निर्विकार अनादि अनुपम,सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है- उसी की उपासना करनी योग्य है।

3. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना- पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।

4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोडने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

5. सब कार्य धर्मानुसार, अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करने चाहिये।

6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और साामाजिक उन्नति करना।

7. सबसे प्रीति पूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य बरतना चाहिये।

8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चहिये।

9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

10. सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहे। इन नियमों को मानने वाला आर्य समाज का सदस्य हो सकता है।

अनादि पदार्थ व उनके गुण, कर्म व स्वभाव

ईश्वर, जीव और प्रकृति इन तीनों पदार्थो को आर्यसमाज अनादि मानता है।

ईश्वर- वह है जिसके ब्रह्म परमात्मादि नाम है। वह सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त है। उसके गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र है, जो सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त सर्वशक्तिमान, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्त्ता-धर्त्ता-हर्त्ता सब जीवों को सत्य-न्याय से फलदाता आदि लक्षणयुक्त है। वह एक ही है अनेक नही।

जीव- ईश्वर से नितान्त भिन्न एक परिछिन्न चेतन पदार्थ है। कुछ गुणों में साधर्म्म और कुछ गुणों में वैधर्म्म भी है। अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष प्रयत्न, सुख दु:ख और ज्ञान गुण वाला है।

प्रकृति- जड़ पदार्थ है और जगत बनाने की समाग्री है।

प्रत्येक वस्तु को बनाने से पूर्व उसके लिये तीन कारणों की आवश्यकता होती है। उनके नाम और उनकी परिभाषा यह है-

(1) निमित्तकारण (मुख्य व साधारण दो प्रकार के है)

(2) उपादान कारण।

(3) साधारण कारण।

निमित्तकारण उसे कहते है जिसके बनाने से कुछ बने, न बनाने से न बने, आप स्वंय बने नहीं, दूसरे को प्रकारान्तर बना देवें।

उपादान कारण- उसे कहते है जिसके बिना कुछ न बने वही अव स्थानतरण रूप होकर बने और बिगडे भी।

साधारण कारण- उसे कहते है जो बनाने में साधन हो और साधारण निमित्त हो।

(1) मुख्य निमित्त कारण परमात्मा है जो सब सृष्टि को कारण (प्रकृति) से बनाने, धारण और प्रलय करने तथा सबकी व्यवस्था रखने वाला है।

साधारण निमित्त कारण जीव है, जो परमेश्वर की सृष्टि में से पदार्थो को लेकर अनेक विध कार्यान्तर बनाने वाला है इसी के लिये परमेश्वर ने सृष्टि का रचना किया है।

(2) उपादान कारण प्रकृति है जिसको सब संसार के बनाने की सामग्री कहते है। वह जड़ होने से आप से आप न बन सकती है न बिगड़

सकती है। किन्तु किसी चेतनकर्ता के बनाने से नियमपूर्वक बनती व बिगाड़ने से नियमपूर्वक बिगड़ती है।

(3) साधारण कारण वे उपकरण (औजार) है जिनमें कोई वस्तु बनाई जाती है। देश और काल भी इसमें सम्मिलित है

पदार्थों के प्रकार

पदार्थ दो ही प्रकार के होते है- नित्य और अनित्य।

नित्य- जिनका न आदि हो और न अन्त हो।

अनित्य- जिनका आदि भी हो और अन्त भी हो।

तीसरी प्रकार के पदार्थों का होना भी असम्भव है। जैसे 'अनादि सान्त या सादि अनन्त।'

ईश्वर जीव और प्रकृति तीनों नित्य पदार्थ है। इनका न आदि है और न अंत है।

परन्तु जगत स्वरूप में अनित्य है। यह उत्पन्न होकर नियत काल तक स्थिर रहकर विनष्ट हो जाता है। ईश्वर में उत्पादक और विनाशक दोनों शक्तियां अनादि काल से (अर्थात् स्वाभाविक) है। इनके प्रभाव से जगत् की उत्पत्ति और विनाश अनादि काल से एक के पीछे दूसरा रहता है। ऐसे होते रहने को 'प्रवाह से अनादि' कहते है।

जगत को उत्पन्न करने का उद्देश्य

जीवात्मा की शक्तियों के पूर्ण विकास अर्थात् किये हुये कर्मो में फल-भोग और परमानन्द(मुक्ति) की प्राप्ति के लिये जगत् का निर्माण हुआ।

अथवा

प्रकृति से परमात्मा पर्यन्त ज्ञान प्राप्त करके लाभान्वित होने के अर्थ जगत् उत्पन्न किया गया है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये भगवान् ने सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों के द्वारा वेद ज्ञान का प्रकाश किया। ऋषियों के नाम ये है- अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा। ये देहधारी मनुष्य थे और सब जीवों से अधिक पवित्र आत्मा थे। यह पवित्रता उन्होने पूर्व सृष्टि में किये हुए कर्मो से प्राप्त की थी।

ऋषि- उसे कहते है, जो वेद-मंत्रों के अर्थो के सूक्ष्मद्रष्टा हों या जिनमें ऐसी योग्यता हो।

वेद चार ये है- **ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।**

वेदों के चार विभाग का कारण

(1) ऋग्वेद में सब पदार्थो के गुणों का प्रकाश किया है जिसमें उनमें प्रीति बढ़कर उपकार लेने की प्रवृत्ति हो सके।

(2) यजुर्वेद में गुण-ज्ञान के अनन्तर क्रियारूप उपकार करके सब जगत का अच्छे प्रकार से हित सिद्ध हो सके, इस विद्या को जनाया है।

(3) सामवेद में ज्ञान, कर्म और उपासना कांड की वृद्धि का फल कितना और कहां तक होना चाहिये, इसका विधान किया है।

(4) अथर्ववेद- तीन वेदों में जो-जो विद्या है उन सबके शेष भाग की पूर्ति, विधान, रक्षा और संशय-निवृत्ति के लिये है।

मनुष्य समाज और मनुष्य जीवन के चार विभाग

वेदों के उपदेश और मनुष्य शरीर की रचना के आधार पर मनुष्य समाज का विभाग चार भाग में किया है। जिनको वर्णनाम से कहते है और वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र है और मनुष्य जीवन का विभाग चार आश्रमों में किया गया है। वे ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व सन्यासाश्रम

है।

ब्राह्मण वर्ण- अविद्या के नाश, विद्या की वृद्धि और सदाचार की शिक्षा के लिये। शम, दम, तप, शोच, आस्तिक्य, ज्ञान और विज्ञान इसके विशेष गुण होगे।

क्षत्रिय वर्ण - अन्याय के नाश, देश और जाति, पतित और दुःखित जनों की रक्षा के लिये। शौर्य, तेज, धृति दक्षता, और युद्ध से पलायन न करना और ईश्वर भावादि क्षत्रिय के विशेष गुण होगे।

वैश्य वर्ण- जीवन यापन की आवश्यकता सामग्री को उत्पन्न करना और इधर-उधर से लाकर जुटाना वैश्य कर्म है।

शुद्र वर्ण -- जिसको पढ़ने- पढाने से कुछ भी न आवे, व निर्बुद्धि व मुर्ख होने से शारीरिक श्रम द्वारा उपर्युक्त तीनों वर्णो की सेवा और सहायता करने के लिये शुद्र है।

ये वर्ण गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर होते है, जन्म के आधार पर नही।

आर्य समाज मनुष्य मात्र के बालकों व बालिकाओं को बिना किसी भेद-भावके समान रूप से विद्या प्राप्त करने का अधिकारी मानता है और विद्यालय में पढाई की समाप्ति पर जिस- जिस विद्यार्थी का जो -जो वर्ण उनकी योग्यतानुसार इनका आचार्य निश्चित करे वह- वह उनका वर्ण मानता है चाहे उनके पिता का वर्ण कुछ भी हो।

धर्माचरण से नीच वर्ण उच्च वर्ण को और अधर्माचरण से उच्च वर्ण नीच वर्ण को प्राप्त हो सकता है।